

ISSN 2277- 534X

शोध-समीक्षा का त्रैमासिक प्रकाशन

साहित्य प्रभा

आर.एन.आई-UA- UTTHIN/2002/6511

वर्ष-17

अंक- 04

अक्टूबर-दिसम्बर 2018

सहयोग राशि : 15 रुपये



ऑल इण्डिया प्रेस काफ्रेंस सोमनाथ गुजरात में सहभागिता



अक्टूबर-दिसम्बर- 2018

साहित्यप्रभा

साहित्यिक त्रैमासिक

वर्ष : 17

अंक : 04

- ★ आशीर्वाद (ब्रह्मलीन) > स्वामी भास्करानन्द पुरी जी महाराज
- ★ संरक्षक > पद्मश्री डॉ० श्याम सिंह 'शशि'
- > डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरूण'
- ★ प्रधान सम्पादक > डॉ. चन्द्र सिंह तोमर 'मयंक'
- ★ उप सम्पादक > राखी सजवाण
- > रूपेश तोमर
- ★ सम्पादकीय सहयोग > डॉ. सुरेश महेश्वरी (जलगाँव)
- > डॉ. पीताम्बर अवस्थी (पिथौरागढ़)
- > डॉ. अवधेश चन्सौलिया, (ग्वालियर)
- > डॉ. (श्रीमती) मनिका शङ्किया (असम)
- > अनुज प्रभात (अररिया)
- > डॉ. नविला सत्यादास, (पटियाला)
- ★ कम्प्यूटर डिजाईनिंग > संजय सिंह नेगी
- ★ विधि परामर्शी > एस.सी. विरमानी, एडवोकेट
- > सत्य नारायण सक्सेना (एडवोकेट)
- > अरूण सक्सेना (एडवोकेट)

स्वत्वाधिकारी, सम्पादक, मुद्रक एवं प्रकाशक डॉ. चन्द्र सिंह तोमर 'मयंक' द्वारा सरस्वती प्रेस, 6 फालतू लाइन, देहरादून से मुद्रित और आमवाला (अपर) पो. तपोवन (नालापानी) देहरादून से प्रकाशित।

EDITORIAL-CORRESPONDANCE

Dr. Chandra Singh Tomar 'Mayank'

Amwala (Upper) P.O. Tapovan

(Nalapani) Dehradun-248008 (India)

Ph : 9411575129.

E-Mail: editor_sahityaprabha@rediffmail.com

पंजी. संख्या : UTT/HIN/2002/6511

इस अंक में.....

विषय वस्तु	रचनाकार	पृष्ठ संख्या
• सम्पादक मण्डल	• विषय सूची	• 01
• सम्पादकीय	• सम्पादक की कलम से	• 02
• फिर मिला खत आपका	• पत्र मजूषा (पाठकों के पत्र)	• 03
• डॉ. उमेश चमोला के....	• डॉ. अनुराधा शर्मा	• 4-7
• लंदन म्यूजियम एक	• डॉ. पशुपतिनाथ उपाध्याय	• 8-14
• पं गिरीमोहन गुरु के	• डॉ. भारती मिश्रा	• 15-16
• धूमिल के काव्य में ...	• डॉ. तृप्ति गोतम	• 17-19
• प्रजा पक्ष का कवि	• डॉ. अमर सिंह वधान	• 20-23
• डॉ. मयंक की	• डॉ. पवनेश ठकुराटी 'पवन'	• 24-25
• सत्यार्थ प्रकाश एक....	• डॉ. श्याम सिंह शशि	• 26-30
• आषाढ़ का एक दिन	• संगीता कुमारी पासी	• 31-33
• मातृ वन्दना (कविता)	• डॉ. रामसनेही लाल शर्मा	• 34
• लालायित करता लेह....	• डॉ. प्रमोद कुमार श्रोतिय	• 35-38
• उत्तर-पूर्वांचल में.....	• श्रीमति अंचल कुमारी राय	• 39-42
• तुलसी के काव्य में.....	• डॉ. अवधेश चन्सौलिया	• 43-44
• संस्कृत साहित्य की....	• डॉ. मनिका शङ्किया	• 45-47
• आध्यात्मिक सांस्कृतिक...	• डॉ. सुरेन्द्र दत्त सेमल्टी	• 48-50
• हिन्दी खड़ी बोली के....	• तरुण कुमार दाधीच	• 51-52

सहयोग राशि

मात्र संस्थागत (Bulk) में one year-	Rs. 160/-
पांच वर्षीय (5 year)	Rs. 500/-
आजीवन (Life)	Rs. 1500/-
संरक्षक (Patron)	Rs. 10,000/-
विदेशों में आजीवन (Abroad)	US डॉलर \$ 40/-

नोट- डाक खर्च आदि एक वर्ष के लिए रु. 100/- तथा पांच वर्ष के लिए रु. 200/- पंजीकरण शुल्क अनिवार्य रूप से सदस्यता राशि के साथ जोड़ा गया है। मात्र पांच वर्षीय अथवा आजीवन सहयोग राशि ही स्वीकार होगी। संस्थागत जो (Bulk) में एक सौ से अधिक पत्रिकाएं क्रय करेंगे उनके लिए एक वर्षीय शुल्क रु. 160/- प्रति सदस्य होगा। अतः सदस्यगण इसी आधार पर अपना नवीनीकरण अथवा सदस्यता गृहण करने की कृपा करें।

समस्त पाठकगण एवं साहित्यप्रभा परिवार से जुड़े सभी सुधीजनों/ प्रबुद्धजनों को गांधी-शास्त्री जयंती, शरदकालीन नवरात्र, दशहरा, दीपावली, भाई दूज, गुरुनानक जयन्ती एवं क्रिसमस दिवस के पावन पर्वों की अनंत मंगलकामनाएँ

-सम्पादक

पत्रिका में छपी सामग्री पर सम्पादक की सहमति होना जरूरी नहीं। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र देहरादून होगा। पत्रिका में सभी पद अवैतनिक हैं।

संस्कृत साहित्य की आधुनिक प्रासंगिकता : अभिज्ञान शाकुन्तलम् के आलोक में

□डॉ. मनिका शङ्कीया□

भारतीय साहित्य धरामुखी साहित्य है। आदि साहित्य वेदों से लेकर परवर्ती समय में लिखित प्रत्येक संस्कृत साहित्य लोक-संपृक्त साहित्य के रूप में परिचित हुए हैं। शायद यही कारण है, हजार-हजार वर्ष पूर्व लिखित ये साहित्य आज भी मनुष्य मात्र को अपनी ओर आकर्षित करने में समर्थ हो रही है। महाकवि भासकृत 'स्वप्नवासवदत्ता' में वर्णित कथांश हो, 'पंचतंत्रम्' की कहानियाँ हो, गीताशास्त्र में निहित सारगर्भित उपदेश हो- सभी काल निर्विशेष ग्रहणयोग्य हैं। संस्कृत के विषय में बद्री प्रसाद पंचौलीजी का कहना है- 'संस्कृत भाषा ने ज्ञान को ज्ञान और विज्ञान को विज्ञान की व्याख्या प्रदान की। ज्ञान को इतना उत्कृष्ट बनाया कि वह ब्रह्मा का स्वरूप बन गया- सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म। उसे जीवन का आधार बना दिया- ऋतेज्ञानान्न मुक्तिः। वेद माता हास्तुता मयावरदा वेदमाता। वह मानवता का संविधान है। उसको जीवन में अपनाकर श्रेष्ठ मानव -आर्य बनने का संकल्प साकार किया जाता है। संस्कृत ने विश्वमानुष की धारणा दी। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना उसी का विकास है।

महाकवि कालिदासकृत 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' आज के परिदृश्य में प्रासंगिक क्यों है, इस पर विचार करते समय हमने देखा कि प्रस्तुत नाटक के सभी मूल पात्र, वर्णित प्रसंग तथा संदेश आदि वर्तमान समय में भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितना तद् युगीन समय में थे। सबसे पहले प्रस्तुत नाटक में वर्णित उस वर्णन को ले सकते हैं, कि जब दुर्वाशा मुनि आते हैं और शकुन्तला अपनी बीती हुई सुखद स्मृतियों में खोई रहती है। शकुन्तला अभ्यागत की अनदेखा करती है और दुर्वाशा क्रोधित होकर उसे श्राप देते हैं। इस प्रसंग की अवतारणा प्रस्तुत नाटक के लिए कितना महत्वपूर्ण है, प्रत्येक दर्शक, पाठक समझता

है। हमारी दृष्टि में प्रस्तुत प्रसंग प्रत्येक काल का प्रत्येक मनुष्य मात्र के प्रति एक संदेश प्रेषित करता है। अतीत की सुखद स्मृति में लीन रहकर वर्तमान की उपेक्षा करना, अवहेलना करना कदापि क्षम्य, ग्रहणयोग्य नहीं हो सकता। ऐसा

व्यवहार भविष्य के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकता है। शकुन्तला और राजा दुष्यंत का विवाह, उनका प्रेम, उनका मिलन, गन्धर्व विवाह आदि सबकुछ सुखानुभूति प्रदायक अवश्य हैं। किन्तु इसी सुखानुभूतिदायक स्मृतियों में लीन रहकर वर्तमान रूपी दुर्वाशा (जिसे कठोर वास्तव मान सकते हैं) की उपेक्षा करने के कारण शकुन्तला को श्रापित होना पड़ा। लेकिन अगर उचित पथ-प्रदर्शक की संगति हो तो भविष्य सुधर सकता है। शकुन्तला के जीवन में सखी अनुसूया और प्रियंबदा ऐसी ही मार्ग-दर्शिका के रूप में आयी हैं। ऋषि द्वारा शापित शकुन्तला सम्पूर्ण घटनाक्रम से अनभिज्ञ थी। सखियाँ अपनी प्राणप्रिय सखी का संकटपूर्ण भविष्य के लिए चिंतित हो उठती हैं और दुर्वाशा से विनती करके सखी का भविष्य सुधारने का मार्ग खोज लेती हैं। दोनों सखियाँ शकुन्तला को इस विषम घटना के सम्बन्ध में जानकारी न देकर अपने में ही सीमित रखने की बात करती हैं, क्योंकि वे नवमल्लिका समान कोमल सखि को दुखी देखना नहीं चाहती थी। प्रियंबदा कहती है-

‘को नामोष्णोदकेन नवमालिकां सिञ्चति।’

वर्तमान समय में संयुक्त परिवार के स्थान पर एकल परिवार की धारणा बहुल मात्रा में अपनायी जा रही है। संयुक्त परिवार तभी सफल हो सकता है, जब परिवार का प्रत्येक सदस्य हर कदम पर अपना त्याग करने को तैयार रहे, एक दूसरे को



यथोचित सम्मान, स्नेह, आदर दें। शकुन्तला वन में पत्नी-बढ़ी प्रकृति कन्या थी। राजकीय व्यवस्था, राज-परिवार के चाल-ढाल से अपरिचिता इस कन्या को नवीन परिवेश के विषय में पूर्व सचेत करना कण्व अपना दायित्व समझता है। पितृगृह छोड़कर पति गृह जाने से पूर्व कण्व अपना पितृ-धर्म पालन करते हुए शकुन्तला को जो उपदेश देते हैं, वह सर्व काल, सर्व समय तथा सर्व

मानव के लिए प्रासंगिक रहा है। कण्व शकुन्तला को उपदेश देते हैं-

‘शुश्रूषस्व गुरुन्कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुविप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याथ्यः।’

कण्व का दिया हुआ यह उपदेश आज भी प्रत्येक उस कन्या के लिए हृदयंगम करने के योग्य है जो विवाहित होने के उपरांत पहले पहल अपने पति के घर जाती है। इसमें उन दोनों प्रकार की स्त्रियों के गुण-दोषों को बतलाया गया है जिससे कोई भी स्त्री अपने पति के घर जाकर वास्तविक ‘गृहिणी’ पद की अधिकारिणी हो सकती है और विपरीत आचरण करने से कुल की कलंक रूप हो जाती है। इस प्रकार प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से देखें तो प्रस्तुत नाटक सर्वश्रेष्ठ है। कालिदास प्रकृति के सूक्ष्म द्रष्टा है। कालिदास की प्रकृति भी जीवन के स्पन्दन के साथ-साथ सजीव प्रतीत होती है और सदा मनुष्य को नवीन शक्ति प्रदान करती है। शाकुन्तलम में प्रकृति एवं जड़ पदार्थों का मानवीकरण बड़े ही सुन्दर ढंग से हुआ है। पशु-पक्षी एवं तपोवन के लता-वृक्ष भी मानवीय वेदना के प्रति अपनी समवेदना व्यक्त करते हैं। शकुन्तला प्रकृति की पुत्री है। उसके संवर्धन में प्रकृति ने प्रमुख भूमिका निभायी है। वस्तुतः शकुन्तला को प्रकृति से पृथक् करके नहीं देखा जा सकता। जिस समय शकुन्तला उत्पन्न हुई है, उसी समय माता-पिता उसे छोड़ देती है। सर्वप्रथम पक्षियों ने उसका पालन

किय, तदनन्तर तपोवन में उसका पालन-पोषण होता है। इसलिए स्वभावतः उसके हृदय में प्रकृति से सम्बन्धित विषयों के प्रति अत्यन्त प्रेम है। वह तपोवन के वृक्षों को अपना सहोदर मानकर सींचती है - ‘अस्ति मे सोदरस्नेहो प्येतेषु’। यही कारणवश पति के घर विदा होनेवाली शकुन्तला के दुख में प्रकृति भी दुखी दिखाई देती है। प्रकृति के प्रति पूज्यभाव रखकर और प्राकृतिक उपादानों में देव-देवियों का संस्थापन करके वस्तुतः भारतीय परम्परा का प्राकृतिक संरक्षण की ओर महत्वपूर्ण कदम माना जा सकता है। राँची विश्व विद्यालय के जनजातीय और क्षेत्रीय भाषा के अध्यापक रामगढ़ निवासी डॉ. बी.एन. उहदार के अनुसार झारखंड के मूल निवासी विभिन्न जीव-जन्तु, पशु-पक्षी तथा पेड़-पौधों को अपने पूर्वज मानकर उनकी सुरक्षा अपना कर्तव्य मानते आए हैं। इन प्रतीक चिह्नों को किसी भी प्रकार हानि पहुँचाना वर्जित है। हानि पहुँचाने पर किसी अज्ञात शक्ति द्वारा दुख दिये जाने का भय दिखाया जाता है। दरसल इनके अन्तर्निहित में प्रकृति संरक्षण ही है। पृथ्वी के अन्य प्रांतों में नदी केवल जल-स्रोत मात्र है। किन्तु भारत में नदी मातृ-स्वरूपा। यथा- गंगा मा, यमुना मा, कावेरी मा। विश्व के अन्य प्रांतों में पर्वत निर्जीव शिलावेष्टित ऊँचा भूमिखंड हो सकता है, किन्तु भारतीय साहित्य और संस्कृति में इन्हीं पर्वतों को देवतुल्य स्थान दिया गया है। उदाहरण के लिए - जयशंकर प्रसाद ने अमर महाकाव्य ‘कामायनी’ का मंगलाचरण हिमालय स्तुति से किया है।

कालिदास ने प्रकृति के सुकोमल और सुन्दर रूप का ही वर्णन किया है। भवभूति के समान प्रकृति के भयावह और उद्दाम रूप का चित्रण नहीं किया है। कालिदास की दृष्टि में प्रकृति सुन्दर और सहानुभूतिशील मात्र है, हमेशा मनुष्य की सहायता करने के लिए उद्यत है। प्रकृति कभी भयानक व्यक्तित्व लिए हुए सामने नहीं आती है, वह कभी भी मनुष्य को डराती हुई और भयभीत करती हुई चित्रित नहीं हुई है।

सृष्टि के प्रारम्भ से प्रकृति मानव के प्रति सहनशील भाव

प्रदर्शित करती आयी है। प्रकृति की गोद में ही मानव का पालन-पोषण हुआ है। इसीलिए प्रकृति मातृ-स्वरूपा है। यह दृश्यमान जगत मूलतः दो तत्वों से बनी है। जीव और प्रकृति। प्रकृति उसत्, जीव उसत् अचित् अआनन्द। अतः देखा जाता है कि सत् रूप में मानव प्रकृति का ही अंश है।

यद्यपि समय-समय पर प्रकृति अपना विकट रूप प्रदर्शित करके सम्पूर्ण सृष्टि को ही नष्ट कर मानव समाज को शिक्षा दे जाती है, फिर भी अपनी ही संतान का मोह छोड़ न पाने के कारण पुनः सृष्टि में मनोनिवेश करती है। 'कामायनी' में इसका सुन्दर उदाहरण है। अपना विध्वंशी रूप दिखाकर देव-समाज को उचित शिक्षा देने के पश्चात् भी प्रकृति अलस भाव से बैठ न पायी और पुनः मोहनीय रूप से चारों दिशाओं को सुशोभित किया। यथा-

'वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का आज लगा हँसने फिर से, वर्षा बीती, हुआ सृष्टि में शरद-विकास नये शिरे से ॥' दरअसल प्रकृति का यह आदर्श मानव के लिए अनुकरणीय है। चूँकि प्रकृति किसी भी कारण अपनी संतान मानव के प्रति प्रीति-मोह त्याग कर नहीं पाती है, अतः मानव का भी प्रकृति के प्रति अवश्य करणीय कर्तव्य है। केवल प्रकृति ही अपना सर्वस्व उड़ेल दे, - ऐसी एक पक्षीय चिन्ताधारा से अगर मानव परिचालित हो, तो उसे भी देव-जाति की तरह सर्वस्वांत होना पड़ेगा- यह निश्चित है। अगर 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' में वर्णित कण्व मुनि द्वारा दिखाए गये आदर्श पर चलकर प्रकृति की सेवा करे, शाकुन्तला की तरह प्रकृति को अपना सहोदर मानकर उसके प्रति सम व्यवहार करे, तो प्रकृति भी मानव के प्रति अपना स्नेहाशीष हमेशा प्रदान करती रहेगी। इस प्रकार विभिन्न दृष्टि से विचार करने पर हमने पाया कि संस्कृत साहित्य हर युग, हर समय के लिए प्रासंगिक रही है। उच्च नैतिक शिक्षा, मूल्यबोध, जीवनादर्श आदि के समाहार स्वरूप संस्कृत साहित्य की आधुनिक प्रासंगिकता सर्वजन ग्राह्य है। □□□

प्राध्यापिका, (हिन्दी विभाग)
गर्वमेंट्स गर्ल्स कॉलेज नगाँव (असम)

गीत

-कृष्ण कुमार 'कनक'

है याद मुझे उन सपनों का अक्सर घर पर आना जाना।

प्रतिबन्धों की दीवारें थीं

फिर भी नजरें मिलती तो थीं

सहमे-सहमे से भौर थे

फिर भी कलियाँ खिलती तो थीं

नयनों से नयनों का मिलना अन्तस की पीड़ा का गाना।

श्रृंगार सजे उन गीतों में

रोली चन्दन का शुभाशीष

जैसे देवालय में बैठ

सजधजकर कोई मठाधीश

मेरी अगवानी में अक्षत-पुंगलीफल नित्य बिछे पाना।

कब घडियाँ-पल-क्षण बीत गये

बातूनी-सर्द हवाओं में

जग का सारा मुख भोग बसा

उनकी प्रसून सी बाहों में

कोमल किसलय सी आशा का अम्बर के तल पर छा जाना।

अविराम विकलता की छाया

काया के क्रन्दन तक आई

नयनों से भरी तरलता की

अब तक न हो सकी भरपाई

वह 'कनक' महल जिसकी छत पर जिन्दा है तेरा सरमाना।

□□□

'कनक-निकुंज' गाँव व पोस्ट गुँदाऊ

ठार मुरली नगर थाना लाइन पार

फिरोजाबाद (उ.प्र.) 283203

मो. 70176446795